6 प्रो० जी० सुन्दर रेड्डी

प्रोफेसर रेड्डी का जन्म सन् 1919 ई० में आन्ध्र प्रदेश में हुआ था। ये श्रेष्ठ विचारक, समालोचक एवं निबंधकार हैं। इनका व्यक्तित्व और कृतित्व अत्यन्त प्रभावशाली है। कई वर्षों तक ये आन्ध्र विश्व-विद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष रहे हैं। ये वहाँ के स्नातकोत्तर अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग के अध्यक्ष एवं प्रोफेसर भी रहे हैं। इनके निर्देशन में हिन्दी और तेलुगु साहित्य के विविध प्रश्नों के तुलनात्मक अध्ययन पर शोध कार्य भी हुआ है। इनका निधन सन् 2005 ई० में हो गया।

लेखक : एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—सन् 1919 ई०।
- **जन्म-स्थान**—आंध्र प्रदेश।
- आंध्र वि०वि० में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष रहे।
- **व्यक्तित्व**—प्रभावशाली।
- **प्रारम्भिक शिक्षा**—संस्कृत एवं तेलुगु से।
- **लेखन विधा** : हिन्दी और तेलुगु भाषा साहित्य।
- **भाषा** : विषय और भाव के अनुरूप।
- **शैली** : विवेचनात्मक, गवेषणात्मक, आलोचनात्मक।
- **प्रमुख रचनाएँ**—साहित्य और समाज, मेरे विचार, दक्षिण की भाषाएँ और उनका साहित्य आदि।
- **मृत्यु**—सन् 2005 ई०।

अब तक रेड्डी जी के आठ ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। इनकी

1. **साहित्य और समाज,**
2. **मेरे विचार,**
3. **हिन्दी और तेलुगु : एक तुलनात्मक अध्ययन,**
4. **दक्षिण की भाषाएँ और उनका साहित्य,**
5. **वैचारिकी, शोध और बोध,**
6. **वेलुगु दारुल (तेलुगु),**
7. **लांग्वेज प्रोबलम इन इंडिया** (संपादित अंग्रेजी ग्रंथ) आदि कृतियों से साहित्य संसार सुपरिचित है। इनके अतिरिक्त हिन्दी, तेलुगु तथा अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं में कई निबंध प्रकाशित हुए हैं। इनके प्रत्येक निबंध में इनका मानवतावादी दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

(1) **हिन्दी और तेलुगु : एक तुलनात्मक अध्ययन**–इसमें रेड्डी जी ने दोनों साहित्यों की प्रमुख प्रवृत्तियों तथा प्रमुख साहित्यकारों का अध्ययन प्रस्तुत किया है। इस कृति की उपादेयता के सम्बन्ध में उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व राज्यपाल डॉ० वी० गोपाल रेड्डी जी ने लिखा है, "यह ग्रंथ तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र का पथ-प्रदर्शक है।"

(2) **दक्षिण की भाषाएँ और उनका साहित्य**–इसमें इन्होंने दक्षिण भारत की चारों भाषाओं (तमिल, तेलुगु, कन्नड़ तथा मलयालम) तथा उनके साहित्यों का इतिहास प्रस्तुत करते हुए उनकी आधुनिक गतिविधियों का सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत किया है। सभी ग्रन्थों में इनकी भाषा-शैली भाव और विषय के सर्वथा अनुकूल बन पड़ी है, जिसमें इनका साहित्यिक व्यक्तित्त्व पूर्ण रूप से मुखरित हुआ है।

श्री रेड्डी की हिन्दी साहित्य-सेवा, साधना एवं निष्ठा सराहनीय है। तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम के साहित्य और इतिहास का सूक्ष्म विवेचन करने के साथ-साथ हिन्दी भाषा और साहित्य से भी उनकी तुलना करने में ये पर्याप्त रुचि लेते रहे हैं। हिन्दीतर प्रदेश के निवासी होते हुए भी प्रो० रेड्डी ने हिन्दी भाषा पर अच्छा अधिकार प्राप्त कर लिया है। इनकी भाषा परिमार्जित तथा सशक्त है और शैली विषय के अनुसार ढल जाती है। भाषा को सम्पन्न बनाने के लिए इन्होंने अपनी भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ-साथ उर्दू, फारसी एवं अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रयोग भी किया है। इनकी शैली के विवेचनात्मक, गवेषणात्मक, प्रश्नात्मक, आलोचनात्मक आदि रूप दिखायी पड़ते हैं। कठिन-से-कठिन विषय को सरल एवं सुबोध ढंग से प्रस्तुत करना इनकी अपनी विशेषता है। प्रो० रेड्डी से हिन्दी साहित्य को बड़ी आशाएँ रही हैं।

भाषा की समस्याओं पर विद्वानों ने बहुत लिखा है परन्तु **'भाषा और आधुनिकता'** पर विशेष रूप से नहीं लिखा गया। विद्वान् लेखक ने वैज्ञानिक दृष्टि से भाषा और आधुनिकता पर विचार किया है। भाषा परिवर्तनशील होती है। इसका इतना ही अर्थ है कि भाषा में नये भाव, नये शब्द, नये मुहावरे तथा लोकोक्तियाँ, नयी रीतियाँ सदैव आती रहती हैं। इन सबका प्रयोग ही भाषा को व्यावहारिकता प्रदान करता हुआ भाषा में आधुनिकता लाता है। विद्वान् लेखक का मत है कि हमें वैज्ञानिक शब्दावली को ज्यों का त्यों लेना चाहिए। व्यावहारिकता की दृष्टि से प्रो० रेड्डी का यह सुझाव विचारणीय है।

भाषा और आधुनिकता

किसी भी क्षेत्र में रमणीयता लाने के लिए नित्य नूतनता की आवश्यकता होती है, इसी को दृष्टि में रखकर ही माघ ने कहा होगा :

'क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः'

रमणीयता और नित्य नूतनता अन्योन्याश्रित हैं, रमणीयता के अभाव में कोई भी चीज मान्य नहीं होती। नित्य नूतनता किसी भी सर्जक की मौलिक उपलब्धि की प्रामाणिकता सूचित करती है और उसकी अनुपस्थिति में कोई भी चीज वस्तुतः जनता व समाज के द्वारा स्वीकार्य नहीं होती। सड़ी-गली मान्यताओं से जकड़ा हुआ समाज जैसे आगे बढ़ नहीं पाता, वैसे ही पुरानी रीतियों और शैलियों की परम्परागत लीक पर चलनेवाली भाषा भी जन-चेतना को गति देने में प्रायः असमर्थ ही रह जाती है। भाषा समूची युग-चेतना की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है और ऐसी सशक्तता तभी वह अर्जित कर सकती है जब वह अपने युगानुकूल सही मुहावरों को ग्रहण कर सके। भाषा सामाजिक भाव-प्रकटीकरण की सुबोधता के लिए ही उद्दिष्ट है, उसके अतिरिक्त उसकी जरूरत ही सोची नहीं जाती। इस उपयोगिता की सार्थकता समसामयिक सामाजिक चेतना में प्राप्त (द्रष्टव्य) अनेक प्रकारों की संश्लिष्टताओं की दुरूहता का परिहार करने में ही निहित है। कभी-कभी अन्य संस्कृतियों के प्रभाव से और अन्य जातियों के संसर्ग से भाषा में नये शब्दों का प्रवेश होता है और इन शब्दों के सही पर्यायवाची शब्द अपनी भाषा में न प्राप्त हों तो उन्हें वैसे ही अपनी भाषा में स्वीकार करने में किसी भी भाषा-भाषी को आपत्ति नहीं होनी चाहिए। यही भाषा की आधुनिकता होती है। भाषा की सजीवता इस नवीनता को पूर्णतः आत्मसात् करने पर ही निर्भर करती है। भाषा 'म्यूजियम' की वस्तु नहीं है, उसकी स्वतः सिद्ध एक सहज गति है। जो सदैव नित्य नूतनता को ग्रहण कर चलनेवाली है।

भाषा स्वयं संस्कृति का एक अटूट अंग है। संस्कृति परम्परा से निःसृत होने पर भी, परिवर्तनशील और गतिशील है। उसकी गति विज्ञान की प्रगति के साथ जोड़ी जाती है। वैज्ञानिक आविष्कारों के प्रभाव के कारण उद्‌भूत नयी सांस्कृतिक हलचलों को शाब्दिक रूप देने के लिए भाषा के परम्परागत प्रयोग पर्याप्त नहीं हैं। इसके लिए नये प्रयोगों की, नयी भाव-योजनाओं को व्यक्त करने के लिए नये शब्दों की खोज की महती आवश्यकता है।

अब प्रश्न यह है कि भाषा में ये परिवर्तन कैसे संभव हैं? यत्नसाध्य अथवा सहजसिद्ध? यत्नसाध्य से हमारा तात्पर्य यह है कि भाषा को युगानुकूल बनाने के पीछे किसी व्यक्ति-विशेष अथवा व्यक्ति-समूह का प्रयत्न होना ही चाहिए। सहजसिद्ध से आशय इतना ही है कि भाषा की यह गति स्वाभाविक होने के कारण यह किसी प्रयत्न-विशेष की अपेक्षा नहीं रखती है। यदि उपलब्ध भाषा वैज्ञानिक आधारों का पर्याप्त अनुशीलन करें, तो पहली बात ही सत्य सिद्ध होगी। अठारहवीं शती में अंग्रेजी भाषा ने और बीसवीं शती में जापानी भाषा ने इस नवीनीकरण की पद्धति को अपनी कोशिशों से सम्पन्न बनाया। हर भाषा की अपनी खास प्रवृत्ति होती है, शब्द-निर्माण तथा अर्थग्रहण की दिशा में उसका अपना अलग रुख होता है। उस विशेष प्रवृत्ति के रुख को ध्यान में रखकर ही, बिना उस भाषा की मूल आत्मा को विकृत बनाये हम अन्य भाषागत शब्दों को स्वीकार कर सकते हैं, चंद रूपगत परिवर्तनों के साथ। यह काम एशिया और अफ्रीका जैसे वैज्ञानिक साहित्य-सृजन की दिशा में पिछड़े हुए देशों में और भी सत्वर होना चाहिए और इसकी अत्यन्त आवश्यकता है।

भाषा की साधारण इकाई शब्द है, शब्द के अभाव में भाषा का अस्तित्त्व ही दुरूह है। यदि भाषा में विकसनशीलता शुरू होती है तो शब्दों के स्तर पर ही। दैनंदिन सामाजिक व्यवहारों में हम कई ऐसे नवीन शब्दों का इस्तेमाल करते हैं, जो अंग्रेजी, अरबी, फारसी आदि विदेशी भाषाओं से उधार लिये गये हैं। वैसे ही नये शब्दों का गठन भी अनजाने में अनायास ही होता है। ये शब्द अर्थात् उन विदेशी भाषाओं से सीधे अविकृत ढंग से उधार लिये गये शब्द, भले ही कामचलाऊ माध्यम से प्रयुक्त हों, साहित्यिक दायरे में कदापि ग्रहणीय नहीं। यदि ग्रहण करना पड़े तो उन्हें भाषा की मूल प्रकृति के अनुरूप साहित्यिक शुद्धता प्रदान करनी पड़ती है। यहाँ प्रयत्न की आवश्यकता प्रतीत होती है।

और एक प्रश्न यह है कि कौन इस साहित्यिक शुद्धीकरण का जिम्मा अपने ऊपर ले सकते हैं? हिन्दी भाषा के नवीनीकरण (शुद्धीकरण) के लिए भारत सरकार ने अब तक काफी प्रयत्न किया है। इसके लिए सन् 1950 में शास्त्रीय एवं तकनीकी शब्दावली आयोग की स्थापना की गयी, जो विज्ञान की हर शाखा के लिए योग्य शब्दावली का निर्माण कर रही है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन जैसी ऐच्छिक संस्थाओं ने भी इस दिशा में कुछ महत्त्वपूर्ण काम किया। राहुल सांकृत्यायन और डॉ0 रघुवीर जैसे मूर्धन्य मनीषियों ने भी इस काम को पहले-पहल अपनी अभिरुचि के कारण अपने ऊपर लेकर, गतिशील बनाने की कोशिश की। अब तक इस दिशा में जो कुछ भी कार्य हुआ है, वह अपर्याप्त ही है। क्योंकि यह कार्य अपनी शैशवकालीन दशा से गुजरकर आगे बढ़ नहीं सका। इसकी प्रगति के अवरोध में दो वर्ग बाधा डालते हैं। प्रथम वह वर्ग, जो अपनी शुद्ध साहित्यिक दृष्टि के कारण आम प्रचलित उन पराये शब्दों को यथावत् ग्रहण करने में संकोच करता है। दूसरा वह वर्ग, जो अपने विषय के पारंगत होने पर भी साहित्यिक व भाषा वैज्ञानिक पृष्ठभूमि के अभाव में उन प्रयुक्त विदेशी शब्दों को मनमाने ढंग से विकृत कर अपनी मातृभाषा में थोपना चाहता है—आजकल कई प्रादेशिक सरकारों ने अपनी प्रांतीय भाषाओं में उच्च स्तरीय पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण के लिए कई आयोगों की स्थापना की है। हम आशा करते हैं कि वे आयोग उपर्युक्त उन बाधित तत्त्वों से हटकर अपना काम सुचारु बना सकेंगे।

विदेशी शब्द, जिन्हें अपनी प्रांतीय भाषाओं में ग्रहण करने की आवश्यकता है। खासतौर पर दो तरह के होते हैं—

1. वस्तुसूचक, 2. भावसूचक।

विज्ञान की प्रगति के कारण नयी चीजों का निरंतर आविष्कार होता रहता है। जब कभी नया आविष्कार होता है, उसे एक नयी संज्ञा दी जाती है। जिस देश में उसकी सृष्टि की जाती है वह देश उस आविष्कार के नामकरण के लिए नया शब्द बनाता है। वही शब्द प्रायः अन्य देशों में बिना परिवर्तन के वैसे ही प्रयुक्त किया जाता है। यदि हर देश उस चीज के लिए अपना-अपना नाम देता रहेगा तो उस चीज को समझने में ही दिक्कत होगी। जैसे रेडियो, टेलीविजन, स्पूतनिक। प्रायः सभी भाषाओं में इनके लिए एक ही शब्द प्रयुक्त है। और एक उदाहरण देखिए : 'सीढ़ी लगाना'। ऊपर चढ़ने के लिए अनादि काल से भारत में एक ही साधन मौजूद था—'सीढ़ी'। औद्योगिक क्रांति आदि ने आवश्यकता के अनुसार और भी कई तरह की सीढ़ियों का निर्माण किया, जैसे लिफ्ट, एलिवेटर, एस्कलेटर आदि। भारतीयों के लिए ये बिल्कुल नये शब्द हैं और इसलिए भारतीय भाषाओं में इसके लिए अलग-अलग नाम द्रष्टव्य नहीं होते। इस स्थिति में उन शब्दों को यथावत् ग्रहण करने में कोई बाधा नहीं होनी चाहिए। फ्रेंच और लैटिन भाषाओं से अंग्रेजी ने ऐसे ही कई शब्दों को आत्मसात् कर लिया और अंग्रेजी से रूसी ने।

कभी-कभी एक ही भाव के होते हुए भी उसके द्वारा ही उसके और अन्य पहलू अथवा स्तर साफ व्यक्त नहीं होते। उस स्थिति में अपनी भाषा में ही उपस्थित विभिन्न पर्यायवाची शब्दों का सूक्ष्म भेदों के साथ प्रयोग करना पड़ता है। जैसे उष्ण एक भाव है। जब किसी वस्तु की उष्णता के बारे में कहना हो तो हम 'ऊष्मा' कहते हैं और परिणाम के सन्दर्भ में उसी को हम 'ताप' कहते हैं वस्तुतः अपनी मूल भाषा में उष्ण, ऊष्मा, ताप—इनमें उतना अंतर नहीं, जितना अब समझा जाता है। पहले अभ्यास की कमी के कारण जो शब्द कुछ कटु या विपरीत से प्रतीत हो सकते हैं, वे ही कालांतर में मामूली शब्द बनकर सर्वप्रचलित होते हैं।

नवीनीकरण कितना ही प्रशस्त कार्य क्यों न हुआ हो उस प्रक्रिया में यह भूलना नहीं चाहिए कि भाषा का मुख्य कार्य सुस्पष्ट अभिव्यक्ति है। यदि सुस्पष्टता एवं निर्दिष्टता से कोई भी भाषा वंचित रहे तो वह भाषा चिरकाल तक जीवित नहीं रह सकेगी। नये शब्दों के निर्माण में भी यही बात सोचनी चाहिए। इस सन्दर्भ में यह भी याद रखना चाहिए कि हम पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर उस शब्द की मूल आत्मा तथा सार्थकता पर उन्मुक्त विचार कर सकें। अंग्रेजी भाषा शासकों की भाषा रही और भाव-दासता की निशानी है—ऐसा सोचकर यदि हम नये शब्दों का निर्माण करने में लग जायँ तो नुकसान हमारा ही होगा, अंग्रेजों का नहीं। उर्दू में प्रयुक्त अरबी और फारसी के शब्दों को जो इस्लाम धर्म को ज्ञापित करनेवाले हैं, हिन्दीवाले त्यागना आरम्भ करें तो हिन्दी-भाषा सहज भाषा न रहकर एकदम बनावटी बनेगी।

यदि यह नवीनीकरण सिर्फ कुछ पंडितों की व आचार्यों की दिमागी कसरत ही बनी रहे तो भाषा गतिशील नहीं होती। भाषा का सीधा संबंध प्रयोग से है और जनता से है। यदि नये शब्द अपने उद्गम स्थान में ही अड़े रहे और कहीं भी उनका प्रयोग किया नहीं जाय तो उसके पीछे के उद्देश्य पर ही कुठाराघात होगा। इसके लिए यूरोपीय देशों में प्रेषक के कई माध्यम हैं : श्रव्य-दृश्य विधान, वैज्ञानिक कथा-साहित्य आदि। हमारी भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक कथा-साहित्य प्रायः नहीं के बराबर है। किसी भी नये विधान की सफलता अंततः जनता की सम्मति व असम्मति के आधार पर निर्भर करती है और जनता में इस चेतना को उजागर करने का उत्तरदायित्व शिक्षित समुदाय एवं सरकार का होना चाहिए। भाषा में आधुनिकता लाने के लिए व्यावहारिक भाषा के स्वरूप का मानकीकरण करने के साथ-साथ लिपि संबंधी सुधार भी आवश्यक है। भाषा के प्रयोग और उपयोग के साथ इन समस्याओं का समाधान जुड़ा हुआ है।

संक्षेप में, नये शब्द, नये मुहावरे एवं नयी रीतियों के प्रयोगों से युक्त भाषा को व्यावहारिकता प्रदान करना ही भाषा में आधुनिकता लाना है। दूसरे शब्दों में केवल आधुनिक युगीन विचारधाराओं के अनुरूप नये शब्दों के गढ़ने मात्र से ही भाषा का विकास नहीं होता वरन् नये पारिभाषिक शब्दों को एवं नूतन शैली-प्रणालियों को व्यवहार में लाना ही भाषा को आधुनिकता प्रदान करना है। क्योंकि व्यावहारिकता ही भाषा का प्राण-तत्त्व है। नये शब्द और नये प्रयोगों का पाठ्य-पुस्तकों से लेकर साहित्यिक पुस्तकों तक एवं शिक्षित व्यक्तियों से लेकर अशिक्षित व्यक्तियों तक के सभी कार्यकलापों में प्रयुक्त होना आवश्यक है। इस तरह हम अपनी भाषा को अपने जीवन की सभी आवश्यकताओं के लिए जब प्रयुक्त कर सकेंगे तब भाषा में अपने-आप आधुनिकता आ जायेगी।

—प्रो० जी० सुन्दर रेड्डी

शब्दार्थ

रमणीयता = सुन्दरता। **सामाजिक भाव-प्रकटीकरण** = सामाजिकता के भाव को प्रकट करना। **तकनीकी शब्दावली आयोग** = यह दिल्ली में है। भारत सरकार ने शिक्षा मंत्रालय के अन्तर्गत सन् 1950 में इसकी स्थापना की थी। **प्राणतत्त्व** = आत्मा। **दुरूहता** = अस्पष्टता। **उद्दिष्ट** = उद्देश्य रखनेवाली। **लीक** = लकीर। **निःसृत** = निकल कर। **संश्लिष्टताओं** = सूक्ष्म विशेषताओं। **परिहार** = निराकरण, निवारण। **स्वतःसिद्ध** = अपने आप प्रकट होनेवाली। **ऐच्छिक** = स्वावलम्बी, स्वयं स्थापित की गयी, आत्मनिर्भर। **नूतन** = नई। **प्रयुक्त होना** = प्रयोग होना। **सार्थकता** = उपयोगिता। **पूर्वाग्रह** = पहले से स्थापित धारणा।

अभ्यास प्रश्न

गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

(क) रमणीयता और नित्य नूतनता अन्योन्याश्रित हैं, रमणीयता के अभाव में कोई भी चीज मान्य नहीं होती। नित्य नूतनता किसी भी सर्जक की मौलिक उपलब्धि की प्रामाणिकता सूचित करती है और उसकी अनुपस्थिति में कोई भी चीज वस्तुतः जनता व समाज के द्वारा स्वीकार्य नहीं होती। सड़ी-गली मान्यताओं से जकड़ा हुआ समाज जैसे आगे बढ़ नहीं पाता, वैसे ही पुरानी रीतियों और शैलियों की परम्परागत लीक पर चलनेवाली भाषा भी जन-चेतना को गति देने में प्रायः असमर्थ ही रह जाती है। भाषा समूची युग-चेतना की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है और ऐसी सशक्तता तभी वह अर्पित कर सकती है जब वह अपने युगानुकूल सही मुहावरों को ग्रहण कर सके। भाषा सामाजिक भाव प्रकटीकरण की सुबोधता के लिए ही उद्दिष्ट है, उसके अतिरिक्त उसकी जरूरत ही सोची नहीं जाती। **[2020 ZN]**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रमणीयता और नित्य नूतनता किस प्रकार अन्योन्याश्रित हैं?
(iii) उपर्युक्त गद्यांश में लेखक ने किस बात पर बल दिया है?
(iv) लेखक ने किसे अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम माना है?
(v) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(vi) सर्जक की मौलिक उपलब्धि का प्रमाण क्या है?
(vii) किससे जकड़ा हुआ समाज आगे बढ़ नहीं पाता?
(viii) रमणीयता और उद्दिष्ट शब्दों का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

(ख) भाषा स्वयं संस्कृति का एक अटूट अंग है। संस्कृति परम्परा से निःसृत होने पर भी, परिवर्तनशील और गतिशील है। उसकी गति विज्ञान की प्रगति के साथ जोड़ी जाती है। वैज्ञानिक आविष्कारों के प्रभाव के कारण उद्भूत नयी सांस्कृतिक हलचलों को शाब्दिक रूप देने के लिए भाषा के परम्परागत प्रयोग पर्याप्त नहीं हैं। इसके लिए नये प्रयोगों की, नयी

भाव-योजनाओं को व्यक्त करने के लिए नये शब्दों की खोज की महती आवश्यकता है। **[2020 ZG, ZJ]**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) किसकी गति विज्ञान की प्रगति के साथ जोड़ी जाती है?

(iii) उपर्युक्त गद्यांश में किस प्रसंग का प्रतिपादन किया गया है?

(iv) भाषा किसका अभिन्न अंग है और क्यों?

(v) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(vi) किसके कारण नयी सांस्कृतिक हलचलें उद्‌भूत होती हैं?

(vii) सांस्कृतिक हलचलें किसके लिए पर्याप्त नहीं हैं?

(viii) किसके लिए नये शब्दों के खोज की महती आवश्यकता है?

(ix) उद्‌भूत और परम्परागत का अर्थ लिखिए।

(x) संस्कृति की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

(xi) नये शब्दों की खोज की आवश्यकता क्यों होती है?

(ग) भाषा सामाजिक भाव-प्रकटीकरण की सुबोधता के लिए ही उद्दिष्ट है, उसके अतिरिक्त उसकी जरूरत ही सोची नहीं जाती। इस उपयोगिता की सार्थकता समसामयिक सामाजिक चेतना में प्राप्त (द्रष्टव्य) अनेक प्रकारों की संश्लिष्टताओं की दुरूहता का परिहार करने में ही निहित है। कभी-कभी अन्य संस्कृतियों के प्रभाव से और अन्य जातियों के संसर्ग से भाषा में नये शब्दों का प्रवेश होता है और इन शब्दों के सही पर्यायवाची शब्द अपनी भाषा में न प्राप्त हों तो उन्हें वैसे ही अपनी भाषा में स्वीकार करने में किसी भी भाषा-भाषी को आपत्ति नहीं होनी चाहिए। यही भाषा की आधुनिकता होती है। भाषा की सजीवता इस नवीनता को पूर्णतः आत्मसात् करने पर ही निर्भर करती है। भाषा 'म्यूजियम' की वस्तु नहीं है, उसकी स्वतः सिद्ध एक सहज गति है। जो सदैव नित्य नूतनता को ग्रहण कर चलनेवाली है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) भाषा की प्रमुख विशेषता क्या है?

(iii) भाषा के उपयोगिता की सार्थकता किसमें निहित है?

(iv) प्रस्तुत गद्यांश में किसका स्पष्टीकरण किया गया है?

(v) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(घ) भाषा की साधारण इकाई शब्द है, शब्द के अभाव में भाषा का अस्तित्व ही दुरूह है। यदि भाषा में विकसनशीलता शुरू होती है तो शब्दों के स्तर पर ही। दैनंदिन सामाजिक व्यवहारों में हम कई ऐसे नवीन शब्दों का इस्तेमाल करते हैं, जो अंग्रेजी, अरबी, फारसी आदि विदेशी भाषाओं से उधार लिये गये हैं। वैसे ही नये शब्दों का गठन भी अनजाने में अनायास ही होता है। ये शब्द अर्थात् उन विदेशी भाषाओं से सीधे अविकृत ढंग से उधार लिये गये शब्द, भले ही कामचलाऊ माध्यम से प्रयुक्त हों, साहित्यिक दायरे में कदापि ग्रहणीय नहीं। यदि ग्रहण करना पड़े तो उन्हें भाषा की मूल प्रकृति के अनुरूप साहित्यिक शुद्धता प्रदान करनी पड़ती है। यहाँ प्रयत्न की आवश्यकता प्रतीत होती है।

प्रश्न– (i) पाठ का शीर्षक और लेखक का नाम लिखिए।

(ii) भाषा की विकासशीलता कैसे शुरू होती है?

(iii) 'अविकृत ढंग' और 'मूल प्रकृति' का क्या आशय है?

(iv) साहित्यिक दायरे में विदेशी भाषा के शब्दों को किस रूप में ग्रहण करना पड़ता है?

(v) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(ङ) कभी-कभी अन्य संस्कृतियों के प्रभाव से और अन्य जातियों के सन्सर्ग से भाषा में नये शब्दों का प्रवेश होता है और इन शब्दों के सही पर्यायवाची शब्द अपनी भाषा में न प्राप्त हों तो उन्हें वैसे ही अपनी भाषा में स्वीकार करने में किसी भी भाषा-भाषी को आपत्ति नहीं होनी चाहिए। यही भाषा की सजीवता होती है। भाषा की सजीवता इस नवीनता को पूर्णतः आत्मसात करने पर ही निर्भर करती है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) भाषा की सजीवता के लिए क्या आवश्यक है?

(iv) लेखक के अनुसार भाषा किस प्रकार समृद्ध होती है?

(v) लेखक के अनुसार भाषा में नवीनता किस प्रकार आती है?

(च) नये शब्द, नये मुहावरे एवं नयी रीतियों के प्रयोगों से युक्त भाषा को व्यावहारिकता प्रदान करना ही भाषा में आधुनिकता लाना है। दूसरे शब्दों में केवल आधुनिक युगीन विचारधाराओं के अनुरूप नये शब्दों के गढ़ने मात्र से ही भाषा का विकास नहीं होता, वरन् नये पारिभाषिक शब्दों को एवं नूतन शैली-प्रणालियों को व्यवहार में लाना ही भाषा को आधुनिकता प्रदान करना है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) किसके प्रयोग से भाषा में आधुनिकता लायी जा सकती है?

(iv) किसके गढ़ने मात्र से भाषा का विकास नहीं होता है?

(v) उपर्युक्त गद्यांश के माध्यम से लेखक ने किन बिन्दुओं पर प्रकाश डाला है?

(छ) नवीनीकरण कितना ही प्रशस्त कार्य क्यों न हुआ हो उस प्रक्रिया में यह भूलना नहीं चाहिए कि भाषा का मुख्य कार्य सुस्पष्ट अभिव्यक्ति है। यदि सुस्पष्टता एवं निर्दिष्टता से कोई भी भाषा वंचित रहे तो वह भाषा चिरकाल तक जीवित नहीं रह सकेगी। नये शब्दों के निर्माण में भी यही बात सोचनी चाहिए। इस सन्दर्भ में यह भी याद रखना चाहिए कि हम पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर उस शब्द की मूल आत्मा तथा सार्थकता पर उन्मुक्त विचार कर सकें।

प्रश्न– (i) पाठ का शीर्षक एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) किन विशेषताओं के अभाव में भाषा चिरकालजीवी नहीं होती?

(iv) 'सार्थकता' और 'उन्मुक्त' का शब्दार्थ लिखिए।

(v) पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर विचार करने का क्या आशय है?

(vi) उपर्युक्त अवतरण के आधार पर भाषा का क्या कार्य है?

(vii) नये शब्दों के निर्माण के समय किन बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए?

(ज) यदि यह नवीनीकरण सिर्फ कुछ पंडितों की व आचार्यों की दिमागी कसरत ही बनी रहे तो भाषा गतिशील नहीं होती। भाषा का सीधा संबंध प्रयोग से है और जनता से है। यदि नये शब्द अपने उद्गम स्थान में ही अड़े रहे और कहीं भी उनका प्रयोग किया नहीं जाय तो उसके पीछे के उद्देश्य पर ही कुठाराघात होगा।

प्रश्न– (i) भाषा का सीधा संबंध किससे है?

(ii) नये शब्दों के प्रयोग न किये जाने पर क्या परिणाम होगा?

(iii) 'कुठाराघात' का आशय स्पष्ट कीजिए।

(iv) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(v) पाठ का शीर्षक और लेखक का नाम लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. प्रो० जी० सुन्दर रेड्डी की जीवनी एवं कृतियों का उल्लेख कीजिए। **[2017 MA, MB, MC, 19 CN, CO, 20 ZC, ZD]**

अथवा प्रो० जी० सुन्दर रेड्डी का जीवन परिचय देते हुए उनकी महत्त्वपूर्ण रचनाओं का उल्लेख कीजिए। **[2020 ZI, ZK]**

2. प्रो० रेड्डी का साहित्यिक परिचय दीजिए।
3. 'भाषा और आधुनिकता' पाठ का सारांश लिखिए।
4. प्रो० जी० सुन्दर रेड्डी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
5. प्रो० जी० सुन्दर रेड्डी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
6. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) रमणीयता और नित्य नूतनता अन्योन्याश्रित हैं।
   (ख) भाषा म्यूजियम की वस्तु नहीं है, उसकी स्वतः सिद्ध एक सहजगति है।
   (ग) भाषा स्वयं संस्कृति का एक अटूट अंग है।
   (घ) भाषा समूची युग चेतना की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है।
   (ङ) भाषा की साधारण इकाई शब्द है, शब्द के अभाव में भाषा का अस्तित्व ही दुरूह है।
   (च) व्यावहारिकता ही भाषा का प्राणतत्त्व है।
   (छ) भाषा का सीधा संबंध प्रयोग से है।
   (ज) संस्कृति परम्परा से निःसृत होने पर भी परिवर्तनशील और गतिशील है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. ''भाषा समूची युग-चेतना की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है।'' स्पष्ट कीजिए।
2. भाषा स्वयं संस्कृति का अटूट अंग कैसे है?
3. 'भाषा की गति विज्ञान की प्रगति के साथ जोड़ी जाती है।' इस उक्ति की सार्थकता सिद्ध कीजिए।
4. हिन्दी भाषा के नवीनीकरण से लेखक का क्या अभिप्राय है?
5. प्रो० जी० सुन्दर रेड्डी ने हिन्दी भाषा की प्रगति के लिए कौन-कौन से उपाय बताये हैं?
6. भाषा को आधुनिक रूप प्रदान करने के लिए कौन-कौन से तत्त्व आवश्यक हैं?
7. इस पाठ की भाषा-शैली की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
8. 'भाषा और आधुनिकता' पर प्रोफेसर रेड्डी के विचारों का सार अपनी भाषा में लिखिए।
9. 'भाषा किसी समाज की दिशा निर्धारित करती है।' 'भाषा और आधुनिकता' निबन्ध के आधार पर इस कथन की सार्थकता पर प्रकाश डालिए।
10. ''भाषा म्यूजियम की वस्तु नहीं, उसकी स्वतःसिद्ध एक गति है।'' इस तथ्य को समझाइए।